देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115
Sept. 2025
Vol.-22, Issue-3(2)

Impact Factor
8.642

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

21वीं सदी का साहित्य : नव विमर्श

Special Issue Editor :
Dr. Poornima S.

Special Issue Co-Editor :
Dr. Anuradha P
Ms. V. Amudha

Editor :
Dr. Naresh Sihag
Advocate

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
#202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

53.	मिट्टी से बना अन्न	डॉ. टी. अरूणा कुमारी	285–289
54.	हसीनाबाद उपन्यास में नारी विमर्श	डॉ. अर्चना शर्मा	290–293
55.	भारतीय महिलाओं को सशक्त बनाने में कानूनी अधिकारों की भूमिका	विवेचना पाण्डेय, डॉ. सरिता भवानी मालवीय	294–300
56.	**Therigatha : Legacy and Relevance in 21st Century Indian Literature**	**Indresh Prasad Purohit**	**301-310**
57.	डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट की कविताओं में यथार्थ विमर्श	डॉ. लता एस. पाटिल	311-315
58.	**Entrepreneurial Self-Efficacy and Entrepreneurial Intentions of Tribal Women: A case Study of Chhattisgarh, India.**	**Dimpal Agrawal**	**316-328**
59.	**The Anatomy of Indifference : Literature as an Antidote to Modern Insensitivity**	**Dr. S. Farhana Zabeen, Dr. I. Jane Austen**	**329-334**
60.	**Quest for Self-Identity and Independence of Women in Preeti Shenoy's The Secret Wishlist**	**Dr. R. Abeetha, Dr.A. Jayashree Prabhakar**	**335-345**
61.	**Feminine Isolation and Resistance through Nature in Anita Desai's *Fire on the Mountain***	**Ms.Greeshma N.P, Dr. I. Jane Austen**	**346-351**
62.	बैंकिंग क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमता के अनुप्रयोग की संभावनाएं और चुनौतियां	डॉ. पूर्णिमा श्रीनिवासन, श्री एच पंढरीनाथ	352–355
63.	मॉरिशस के समकालीन प्रवासी हिन्दी साहित्यकार अभिमन्यु अनत और रामदेव धुरन्धर के सृजनात्मक विचारों का अध्ययन	वी. अमुधा, डॉ. अनुराधा पाकलापाटि	356–360
64.	डॉ. विद्या बिंदु सिंह के कथा-साहित्य में बदलते सामाजिक सरोकार	जे. अशोक कुमार जैन, डॉ. अनुराधा पाकलपाटि	361–365
65.	मंजरी : किन्नर विमर्श	डी श्रीदेवी, डॉ. पूर्णिमा श्रीनिवासन	366–369
66.	सामाजिक माध्यम और इंटरनेट पर रचनात्मकता : नए माध्यम एवं नई भाषा (बाल साहित्य के संदर्भ में)	गुरू गोविंद विश्वत, डॉ. अनुराधा पाकलपाटि	370–375
67.	वृद्धों के प्रति संवेदनहीन होती मनुष्यता	बी. कमला, डॉ. अनुराधा पाकलपाटि	376–381
68.	इक्कीसवीं सदी की हिंदी कथा साहित्य में बदलता हुआ सामाजिक यथार्थ	डॉ. अनुराधा पी.	382–386
69.	कृष्नचंदर कृत 'जामुन का पेड़' कहानी में प्रशासनिक विमर्श	डॉ. पूर्णिमा श्रीनिवासन	387–392

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 382-386

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

इक्कीसवीं सदी की हिंदी कथा साहित्य में बदलता हुआ सामाजिक यथार्थ

डॉ. अनुराधा पी.
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग,
विस्टास, पल्लावरम, चेन्नई–600117

सार :

इक्कीसवीं सदी का हिन्दी कथा साहित्य समाज के बदलते हुए स्वरूप का सजीव दस्तावेज है। इस युग की कहानियाँ और उपन्यास आधुनिक जीवन कि जटिलताओं, संघर्षों और मूल्य–परिवर्तनों को गहराई से चित्रित करते हैं। वैश्वीकरण, उपभोक्तावाद, शहरीकरण और राजनीतिक परिवर्तनों से गुजर रहाई। इन सब में व्यक्ति के जीवन और संबंधों को प्रभावित किया है। कथाकारों ने बदलते परिवार, स्त्री की अस्मिता, दलित जीवन, गाँव से महानगर तक फैले जीवन द्वन्द्व, पर्यावरण संकट, राजनीत और संपरदायिक संकट जैसे विषयों को यथार्थ रूप से प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत आलेख के माध्यम से काशीनाथ सिंह, मृदुल गर्ग, राजेन्द्र यादव, ममता कालिया, मालती जोशी, अलका सरावगी जैसे लेखकों की रचनाएँ आधुनिक समाज के अंतविरोधों को उजागर करती हैं।

बीज शब्द : साहित्य, सामाजिक यथार्थ, वैश्वीकरण, उपभोक्तावाद, स्त्री विमर्श, निम्न–वर्ग, वृद्ध और अकेलापन, पर्यावरण, संस्कृति, राजनीति।

प्रस्तावना :

साहित्य समय और समाज का दर्पण मानी जाती है। बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में जहाँ हिंदी साहित्य ग्रामीण जीवन, स्वतंत्रता आंदोलन, सामाजिक विसंगतियों तथा स्त्री–पुरुष असमानताओं पर केंद्रित थीं, वहीं इक्कीसवीं सदी में इनका फलक और भी व्यापक हो गया है। बदलते सामाजिक परिदृश्य, वैश्वीकरण, सूचना–प्रौद्योगिकी, शहरीकरण, उपभोक्तावाद और स्त्री–विमर्श जैसे मुद्दों ने हिंदी साहित्य को नई संवेदनशीलता और दृष्टि प्रदान की है। इक्कीसवीं सदी की कथा साहित्य केवल घटनाओं का बयान नहीं करतीं, बल्कि सामाजिक यथार्थ को उसकी जटिलताओं, द्वंद्वों और संभावनाओं सहित प्रस्तुत करती हैं।

बदलते हुए सामाजिक यथार्थ का स्वरूप :

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज मनुष्य का व्यक्तित्व निर्माण में अहम् भूमिका निभाती है और साहित्य समाज का दर्पण है। 'समाज में घटित घटनाओं को यथार्थ से चित्रण करना ही सामाजिक यथार्थ अर्थात सोशल रियालिटी है।' समय के साथ सामाजिक यथार्थ का स्वरूप बदलाव अनिवार्य है। यह एक ऐसा मौलिक सिद्धांत है जिसे इतिहास, समाजशास्त्र और दर्शन के अध्ययन से समझ जा सकता है। बदलाव ही एकमात्र

स्थिरांक है, और सामाजिक यथार्थ इसका अपवाद नहीं है।

इक्कीसवीं सदी का समाज अनेक स्तरों पर परिवर्तन का साक्षी है। एक ओर गाँवों का क्षरण और शहरों का विस्तार हो रहा है, वहीं दूसरी ओर परिवार और रिश्तों की परिभाषा बदल रही है। तकनीकी विकास ने मनुष्य को सुविधा तो दी है, परंतु मानसिक दूरी भी बढ़ाई है। शिक्षा, राजनीति, आर्थिक असमानता, जातिगत भेदभाव, सांप्रदायिक तनाव और पर्यावरण संकट जैसे विषय अब साहित्यकारों के लिए अनिवार्य विमर्श बन चुके हैं। हिंदी रचनाकारों ने इन परिवर्तनों को गहराई से महसूस कर अपने कथानक और पात्रों में उकेरा है।

वैश्वीकरण और उपभोक्तावाद :

इक्कीसवीं सदी की कहानियों में वैश्वीकरण और उपभोक्तावाद की छाप स्पष्ट मित्रता और पारिवारिक रिश्तों पर भी उपभोग की प्रवृत्ति हावी होती जा रही है। कहानीकारों ने दिखाया है कि कैसे युवा पीढ़ी आधुनिक जीवनशैली की चकाचौंध में उलझकर अपने सांस्कृतिक मूल्यों से दूर होती जा रही है। इसी सन्दर्भ में काशीनाथ सिंह के उपन्यास 'रेहन पर रग्घू' द्वारा संस्कृति की विस्थापना को बहुत बारीकी से दिखाते हैं। इस उपन्यास का मुख्य पात्र 'रघुनाथ' संस्कृति एवं परंपरा की विस्थापन के विरोध करते है। रघुनाथ अपनी पुश्तैनी जमीन को बेजने के लिए तैयार नहीं हैं, लेकिन उनका संतान जो वर्तमान की चकाचौंध से प्रभावित हैं और आधुनिकता की जीवन शैली को श्रेष्ठ मानते हैं, उनके लिए जमीन एक मात्र टुकड़ा है। उपभोक्तावादी मानसिकता के कारण उनका बेटा कहता है– 'जमीन के लिए क्यों मरे जा रहे हैं? छोड़िए उसे।' इस पर रघुनाथ पलटवार करते हैं– 'जाने कहाँ से इतने नालायक और निकम्मा लड़के पैदा हो गए–सेल। पिछले जन्म के पाप। इस जमीन ने तुम्हारे आजा को खिलाया। तुम्हारे दादा–परदादा को खिलाया। यही नहीं तुम्हारे बेटों और नाती–पोतों को भी खिलाएगी। तुम खरोड़ों कमाओगे लेकिन रुपया–डॉलर नहीं खाओगे। भगवान ना करे वह दिन आए जब बैंक चावल, दाल के लिए लोन बांटे। साले तुम लोग बड़े हुए हो अपनी मां का दूध पीकर और तुम्हारी मां की महतारी है यह जमीन और बोलते हो..छोड़िए उसे।"[1]

स्त्री–विमर्श और लैंगिक असमानता :

इक्कीसवीं सदी की हिंदी कहानियों में स्त्री की स्थिति और संघर्ष एक केंद्रीय विषय है। अब स्त्री केवल करुणा और त्याग की प्रतीक न होकर अपनी अस्मिता, अधिकार और स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ती नजर आती है। विवाह संस्था, घरेलू हिंसा, कार्यक्षेत्र में शोषण, देहदृविपणन और पितृसत्तात्मक मानसिकता के खिलाफ आवाज उठाती स्त्री पात्र कहानियों में प्रमुख हैं। 'यह मैं हूँ' की सरल कालरा', 'दो एक फूल' की 'शांतम्मा' अपने पति की आर्थिक सहायता के लिए सरल रेडियो स्टेशन तथा मालती के घर काम करती है फिर भी न तो उन्हें पति का प्यार मिलता है और न ही सहयोग। ऐसे में उनका जीवन और भी कष्टकर बन जाता है।"[2] महिला कहानीकार मृदुला गर्ग ने स्त्री जीवन की जटिलताओं और चुनौतियों को यथार्थवादी दृष्टि से प्रस्तुत किया है।

गाँव से महानगर तक का संक्रमण :

इक्कीसवीं सदी में हिंदी उपन्यासकारों ने गाँव और शहर के बीच की खाई को भी अपनी कथाओं में गहराई से दिखाया है। गाँव से शहर की ओर पलायन, बेरोजगारी, मजदूर जीवन, झुग्गी–झोपड़ी का अस्तित्व और शहरी जीवन की विडंबनाएँ नई कहानियों में प्रमुख हो गई हैं। जहाँ पहले गाँव की कथाएं सामूहिकता और संस्कृति के प्रतीक थीं, वहीं आज वे विस्थापन, निर्धनता और उपेक्षा की त्रासदी को उभारती हैं। दूसरी ओर,

महानगर की कहानियाँ अकेलेपन, प्रतिस्पर्धा और भागदौड़ से उपजे तनाव को सामने लाती हैं। 'उसके हिस्से की धूप' उपन्यास में 'जितेन तथा मनीषा बंगलूर शहर में रहते हैं। सभी प्रकार से सुविधा सम्पन्न, शहरीय जीवन की सुगमता उनकी जीवन शैली से स्पष्ट रूप से झलकती है। शहरीय जीवन सम्बन्धी अलग–अलग विचारी दृष्टिगोचर होते हैं। मधुकर कहता है– 'बम्बई भी रहने लायक अच्छी जगह है', उसने फौरनं कहां।

'नहीं, बिल्कुल बेकार।'

'फिर भी दिल्ली से अच्छी रहती है।'

बंगलूर के सुखद वातावरण का जिक्र करते हुए मधुकर कहता है –

'मैं सही मौसम में बंगलूर आया हूँ। जहाँ देखों फूल–ही–फूल हैं।' 'यही तो बात है। बंगलूर के लिए सभी मौसम सही मौसम है।'

जहाँ एक ओर शहरीय जीवन के सुखद वातावरण का उल्लेख है वहीं शहर की भीड़–भाड़ तथा अति व्यस्त परिवेश का। यथा– 'उसने पाया, वहाँ न समुद्र का अछोर तट है, न वन की बल खाती पगडण्डी। वह बंगलूर के सर्वाधिक रेलपेल वाले व्यस्त महात्मा गाँधी मार्ग पर खड़े हैं...।'[3]

आधुनिकता का प्रभाव और बदलते रिश्ते :

आधुनिकता व पश्चमीकरण के प्रभाव से समाज में मानवीय संबंधों में खटास और खोखलापन बड़ने लगी, लोगों में विवाह की जगह सह–जीवन का विकास होने लगा। जिसमें स्त्री–पुरुष बिना विवाह बंधन के एक साथ रहने लगे, यह विधि महानगरों में पिछले कुछ दशकों से दिन–ब–दिन बढ़ती जा रही है। जिसका कारण समाज में बदलते सामाजिक विचार, रहन–सहन, आर्थिक स्वतंत्रता आदि को माने जा सकते हैं। यह संस्कृति महानगरों में तेजी से बढ़ती जा रही है। लेकिन इस नई संस्कृति को पुरानी पीढ़ी स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं। विवेचित विषय पर प्रसिद्ध लेखिका ममता कालिया द्वारा कृत 'दौड़' उपन्यास में सह–जीवन पर दो पीढ़ियों के द्वन्द्व को दर्शाते हुए लिखती है– "मैंने तो ऐसी कोई लड़की नहीं देखि जो शादी से पहले ही पट्टी के घर में रहने लगे। तुमने देखा क्या है माँ? इलाहाबाद से निकलोगी तो देखोगी न। यहाँ गुजरात, सौराष्ट्र में शादी होने के पहले ऐसी महिना भर ससुराल में रहती है लड़का–लड़की एक दूसरे के तौर तरीके समझने के बाद ही शादी करते हैं।"[4]

दलित और हाशिए का साहित्य :

इक्कीसवीं सदी में दलित और हाशिए पर खड़े समुदायों की आवाज हिंदी उपन्यासों में और सशक्त हुई है। जातिगत भेदभाव, सामाजिक अन्याय और आर्थिक शोषण की कहानियाँ समाज के उस यथार्थ को सामने लाती हैं जिसे लंबे समय तक दबा दिया गया था। ओमप्रकाश वाल्मीकि, शरणकुमार लिंबाले, मोहनदास नैमिशराय जैसे लेखकों की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए नए कहानीकारों ने दलित–विमर्श को समकालीन संदर्भों में प्रस्तुत किया है।

निम्न–वर्ग के हितों को पूँजीपति रूपी दानव हड़पने के लिए तत्पर रहते हैं। कम से कम वेतन में उनसे अधिक से अधिक काम लेते हैं। अगर कोई इसके विरुद्ध आवाज उठाता है तो उसे या तो मिल से निकाल दिया जाता है या अगर वह मजदूरों को संगठित करता है तो उसे ठिकाने लगवा देते हैं। इसी संदर्भ में 'उखड़े हुए लोग' उपन्यास में एक मजदूर पत्र के माध्यम से लेखक व्याख्या करते हैं– "हमारी किस्मत में यही बदा है यही

लिखा है। जिंदा रहोगे तो तुम्हारा खून मिलों में निचोड़ा जायेगा तुम बायलरों में जल–जल कर मरोगे, और वैसे मरने से इन्कार कर दोगे तो नतीजा सामने है।"[5]

वृद्ध और अकेलापन :

आज के परिवारों में युवा पीढ़ी की व्यस्तता और भौतिक सुख–सुविधाओं कि दौड़ में वृद्धों को समय न दे पान, उन्हें अकेलापन महसूस कराता है। व्यक्ति स्वतंत्रता परिवार में बढ़ती उदासीपन, परायापन और भावनात्मक दूरी वृद्धों को अकेलेपन और उपेक्षित महसूस कराती है। वृद्धावस्था में शारीरिक दुरभलता, रोगों और दूसरों पर निर्भरता के कारण वृद्ध अक्सर दूसरों पर बोझ का अहसास करती है, जिसके कारण उनका अकेलापन और बढ़ता है। मालती जोशी अपनी कहानी 'वो तेरा घर ये मेरा घर' के माध्यम से यह दर्शाती है कि– "लड़कियों को एक दिन सुसुराल जाना है। लड़कों को रोजगार के लिए बाहर निकलना है। और एक बार उड़ना सीख जाते हैं तो पखेरू घोंसले में कहाँ लौटते हैं। अब मुझे अम्मा–बाबूजी की पीड़ा समझ में आ रही है।'

'कैसी पीड़ा?'

'पाँच–पाँच बेटों के होते हुए अंत में अकेले ही रह गए थे दोनों।"[6]

पर्यावरण और पारिस्थितिक संकट :

मनुष्य का प्रकृति से संबंधन जन्मजात है। उसका जीवन और अस्तित्व पुर्णतः प्रकृति पर निर्भर करता है तथा वाही उसे बनाये रख सकता है। इसलिए, प्रकृति के स्वाभाविक स्वरुप में परिवर्तन या हस्तक्षेप करने से पहले उसके दीर्घकालिक प्रभावों पर अवश्य विचार करना चाहिए मनुष्य का प्रकृति से संबंधन जन्मजात है। उसका जीवन और अस्तित्व पुर्णतः प्रकृति पर निर्भर करता है तथा वाही उसे बनाये रख सकता है।

इक्कीसवीं सदी की उपन्यासों में केवल मानवीय रिश्तों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे पर्यावरणीय संकट की ओर भी ध्यान खींचती हैं। जंगलों की कटाई, प्रदूषण, जल संकट और औद्योगीकरण से उपजे संकटों ने मानव जीवन को असुरक्षित बना दिया है। उपन्यासकार अब इन मुद्दों पर भी समाज को चेतावनी देते हैं। इस सन्दर्भ में अलका सरावगी ने 'एक ब्रेक के बाद, उपन्यास में सतत विकास एवं नवीकरणीय उर्जा का उपयोग कर पृथ्वी की रक्षा के लिए किये जा रहे मानवीय प्रयासों के सन्दर्भ मरीं यह रचना नवउपनिवेशवादी शक्तियों द्वारा अपने साम्राज्य को बनाये रखने की चालों को बहुत ही स्पष्ट और निष्पक्ष रूप से उजागर करती है– 'भाई, आप फैक्टरियां बंद मत कीजिए, बेशक हवा में कार्बन छोड़ते रहिये। बस, जैसे आप स्टील फैक्ट्री के लिए लोहा खरीदते रहते हैं, वैसे ही कार्बन क्रेडिट खरीद लिजिए। पूरी धरती का असमान तो एक ही है, आप कहीं हवा–पानी बिगाडिए, पर कहीं और कि हवा–पानी सुधार दीजिए। दिक्कत क्या है?'[7]

सांप्रदायिकता और राजनीतिक यथार्थ :

आज का समाज सांप्रदायिक तनाव और राजनीतिक विद्रूपताओं से अछूता नहीं है। हिंदी कहानियों ने इस कटु यथार्थ को भी प्रतिबिंबित किया है। विभाजन, दंगों और धार्मिक उन्माद से पीड़ित व्यक्ति और समाज को मार्मिक ढंग से प्रस्तुत करती हैं। अखिलेश, नया ज्ञानोदय में राज्य–सत्ता की आलोचना करते हुए कहते हैं– 'मेरी टूटी हुई हड्डियाँ देखिये। ये मेरी हड्डियाँ नहीं टूटी हैं, इस देश के लोकतंत्र को फ्रेक्चर हो गया है। मेरा अपाहिजपन दरअसल इस देश के शक्तिपीठों की क्रूरता और न्याय प्रणाली की विकलांगता को दर्शाता है। इस कहानी का अंत एक कल्पना से होता है जिसमें यह दिखाया जाता है कि देश में लोग सरकार, धनिकों और

धर्माधीशों के खिलाफ सड़क पर उतर आये हैं और सचमुच में क्रान्ति होने वाली है।'[8] लेखक अजय तिवारी इसकी आलोचना करते हैं 'कभी समाजवाद के सपने के साथ नए इन्सान की ऐसी सांस्कृतिक कल्पना पेश की गई थी। आख्यान के रूप में उसी सपने को इक्कीसवीं सदी के अनुरूप ढलकर अखिलेश हिंदी के समकालीन रचनाकारों के आगे एक विकल्प प्रस्तावित करते हैं।'[9]

निष्कर्ष :

इक्कीसवीं सदी की हिंदी कथा–साहित्य बदलते हुए सामाजिक यथार्थ की अतः कह सकते हैं कि इक्कीसवीं सदी का कथा साहित्य बदलते सामाजिक यथार्थ, संवेदनशील अभिव्यक्ति एवं जीवंत दर्पण है, जो समय कि सच्चाईयों को सामने लाकर समाज को आत्मचिंतन और परिवर्थन की दिशा में प्रेरित करता है। इनमें व्यक्ति और समाज के अंतर्विरोध, तकनीकी बदलाव, वैश्वीकरण, स्त्री–विमर्श, दलित चेतना, पर्यावरण संकट और राजनीतिक विद्रूपताओं का यथार्थवादी चित्रण मिलता है। आज का साहित्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन और चेतना की वाहक हैं। वे पाठकों को सोचने, सवाल उठाने और समाज के प्रति जिम्मेदार बनने की प्रेरणा देती हैं।

संदर्भ सूची :

1. काशीनाथ सिंह, रहन पर रग्घू, दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, पृ. सं. 85.
2. मृदुला गर्ग, संगति –विसंगति, दुनिया का कायदा, पृ सं. 74
3. मृदुला गर्ग, उसके हिस्से की धूप, राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1987, छठी आवृत्ति, 2011, पृ. सं. 78, 77, 79
4. ममता कालिया, दौड़, पृ. सं. 64
5. राजेन्द्र यादव, उखड़े हुए लोग, पृ. सं. 296)
6. मालती जोशी, वो तेरा घर ये मेरा घर, सांझा की बेला पंछी अकेला, पृ. सं. 21–22
7. अलका सरावगी, एक ब्रेक के बाद, पृ. 151
8. श्रृंखला–अखिलेश, नया ज्ञानोदय, मई 2011, पृ. सं–30
9. सत्ता की क्रूर कथा–अजय तिवारी, नया ज्ञानोदय, मई 2011, पृ. सं.–38

Email: anuradha.hindi@vistas.ac.in

Mobile : 7299012063